संस्थापित १८६७ ई०

आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

एक प्रति ₹ २.००
वार्षिक शुल्क ₹ १००
(विदेश ५० डालर वार्षिक) आजीवन शुल्क ₹ १०००

● वर्ष : १२२ ● अंक : ३२ ● ५ सितम्बर २०१७ भाद्रपद शुक्ल पक्ष चतुर्दशी संवत् २०७४ ● दयानन्दाब्द १६३ वेद व मानव सृष्टि सम्वत् : १६६०८५३११८

आर्य समाज के उपदेशक

आर्य समाज रूपी भवन की नींव के पत्थर हैं।

– डॉ० धीरज सिंह

अरनियाँ–बु०शहर– आर्य समाज रूपी भवन की नींव (आधारशिला) के पत्थर हैं आर्य समाज के उपदेशक, जो दिन–रात वेद प्रचार करते हुए अपना सुख समाज में न्यौछावर करते हैं। उन्हें भूख–प्यास की भी चिन्ता नहीं रहती ऐसे ही उपदेशक विद्वान् तथा सन्यासी इस ग्राम अरनियाँ ने आर्य समाज को दिये हैं। आर्य समाज ग्राम अरनियां का सदैव ऋणी रहेगा जिस ग्राम ने महात्मा अमर स्वामी जैसे शास्त्रार्थ महारथी पैदा किये जिस ग्राम ने कुँवर सुखलाल आर्य मुसाफिर जैसे उपदेशक पैदा किये तथा वैदिक वद्वान् प्रो० योगेन्द्र कुमार शास्त्री जैसे विद्वान दिये जो जम्मू कश्मीर में वेद का झण्डा फहराते रहे, श्री नेमपाल शास्त्री जैसे विद्वान् दिये मुझे बताया कि इस ग्राम से १० उपदेशक आर्य समाज को मिले हैं। पूरे आर्य जगत् में जितना सम्मान रहा है मुझे बताया गया कि २५ वर्ष पूर्व एक बार एक सरदार पंजाब से दिल्ली होते हुए आगरा जा रहे थे तो उन्होंने खुर्जा के बाद सड़क पर अरनियां ग्राम का बोर्ड देखा और देखकर गाड़ी रुकवायी लोगों से पूछा कि यह अरनियां ग्राम क्या वही है जहाँ कुँवर सुखलाल जी पैदा हुए थे, लोगों ने उत्तर में हाँ जी कह कर गर्दन हिलाई तो बताते हैं कि वह सरदार गाड़ी से नीचे उतर गया और जूते गाड़ी में रख दिये ड्राइवर से बोला ग्राम पार करके गाड़ी रोक लेना मैं एक महापुरूष के जन्मस्थान से गुजर रहा हूँ आज मेरे जीवन का सौभाग्य है और वह नंगे पाँव ग्राम पार करके गया गाँव को मत्था टेका– कितनी श्रद्धा थी उस व्यक्ति में उसने बातया कि हमारे पंजाब में श्री कुँवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर को लोग देवता मानते हैं आज भी श्रद्धा से याद करते हैं, ग्राम के लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ।

ऐसे ही महात्मा अमर स्वामी जी महाराज थे। उनका भी देश में बड़ा सम्मान था ग्राम में तो बहुत कम आते थे सारा जीवन शास्त्रार्थ करने में वेद प्रचार में गुजारा। गाजियाबाद को केन्द्र बनाकर रहे। पं० नेमपाल जी दिल्ली रहे, श्री योगेन्द्र कुमार जी शास्त्री जम्मू रहे कहीं भी रहे पर अरनियां ग्राम तो मूल केन्द्र था। आर्य समाज अरनियाँ गौरवशाली आर्य समाज है। मैं भी अपने को सौभाग्यशाली अनुभव करता हूँ कि मैं भी खुर्जा का निवासी हूँ मेरे निकट के ग्राम में ऐसे प्रतिभाशाली उपदेशक विद्वान हुए हैं आज इस ग्राम में आकर मुझे अपार हर्ष हो रहा है। मैं तो निवेदन करना चाहता हूँ कि इस जिले को यह गौरव प्राप्त है कि आर्य समाज के इतिहास में अब तक सबसे अधिक उपदेशक, विद्वान, कार्यकर्ता इस जिले ने दिये हैं तो भविष्य में भी हमें संकल्प लेकर तैयारी करनी है। अपने पुत्रों को प्रेरणा देकर गुरूकुलों में भेजें उपदेशक विद्यालयों में भेजें आर्यवीर दल के शिविरों में शाखाओं में भेजें आर्यसमाज के विद्यालयों में पढ़ावें जो संस्कार भविष्य में अपने पूर्वजों की प्रेरणा से आर्य समाज के प्रचारक बनने के लिए योजना से तैयारी करें। महर्षि दयानन्द जी सरस्वती जब तपस्या कर रहे थे गंगा किनारे सबसे अधिक समय तक बु० शहर जिले में ही रूके है चाहे अनूपशहर हो, कर्णवास हो अथवा बु०शहर का कोई अन्य ग्राम हो उसी का प्रवाह रहा कि आर्यसमाज इस जिले में फलता फूलता रहा। अब उसे पानी और खाद देने की आवश्यकता है मैं आर्यसमाज अरनियाँ के सभी आर्यों से निवेदन करूँगा कि इस सन्देश को जन–जन तक पहुँचकर म० दयानन्द सरस्वती एवं महात्मा अमर स्वामी जी भी कुँवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर के उपकारों को सदैव आने वाली पीढ़ी को सुनाते रहें। तभी हम ऋण मुक्त हो सकते हैं।

माननीय श्री सत्यपाल सिंह जी को केन्द्रीय मंत्री बनाये जाने पर हार्दिक बधाई

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती एवं वैदिक सिद्धान्तों के अनुयायी माननीय श्री सत्यपाल सिंह जी को मानव संसाधन एवं जल संसाधन राज्य मंत्री भारत सरकार बनाये जाने पर उ०प्र० के आर्य समाजों की शिरोमणि संस्था आर्यप्रतिनिधि सभा उ०प्र० की ओर से कोटिशः हार्दिक बधाई। आशा एवं विश्वास है कि महर्षि दयानन्द सरस्वती के सिद्धान्तों के पथ पर चल कर राष्ट्र के गौरव को गौरवान्वित करेंगे।

–डॉ० धीरज सिंह (प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा उ०प्र०)

डॉ. धीरज सिंह
कार्यवाहक प्रधान/संरक्षक

स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
मंत्री/प्रधान सम्पादक

सम्पादकीय.....

गणेश चतुर्थी महोत्सव- एक चित्र

गणेश चतुर्थी का पर्व पहले, वर्ष १६२१ में लोकमान्य बाल गंगाधर जी के द्वारा युवकों को संगठित करने के लिए ने प्रारम्भ किया था। अब पूरे देश में टी०वी० के माध्यम से प्रचार होने से मनाया जाता है। जब हम छोटी कक्षाओं में पढ़ते थे तब गुरूजन हमारे परिवारों में जाते थे बच्चे साथ में लकड़ी का कोई खेल दिखाते थे और दक्षिणा लेकर अगले परिवार में जाते थे सम्भवतया गुरूपूजन परम्परा से जुड़ी एक कहानी थी। अब रूप बदल गया है जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में पण्डित मिट्टी की डली में कलावा बाँधकर कार्य चलाकर पूजन कराकर दक्षिणा ले लेते हैं। शहरों में अब कुछ परिवर्तन है उतनी ही दक्षिण भी बढ़ गई है मंहगाई को देखतें हुए इस पर भी कुछ प्रभाव पड़ा है लेकिन इसका यथार्थ क्या है? पूजन क्यों करते हैं प्रत्येक शुभ कर्म हो अथवा दुःख का समय हो गणेश पूजन अनिवार्य क्यों है? गणेश के माता–पिता गुरूजन भाई पिता से भी बड़े भगवान विष्णु–ब्रह्मा जी हैं उनके भी अन्य अवतार हैं पर गणेश जी को ही पूजा स्थान पर सजाते हैं उत्तर मांगते है कोई उत्तर भी नहीं देता। समस्या बढ़ती जा रही है और मंहगाई को बढ़ाया जा रहा है अनावश्यक खर्च हो रहा है। अभी समाचार में था कि कोई दिव्य प्रतिमा बना रहा है जब छोटी सी मिट्टी के ढेले से काम चल सकता है तो फिर इतना खर्च क्यों? इससे भी मूर्खतापूर्ण दृश्य तब देखा जब उसे विदाई समारोह में लेजाकर नदी अथवा तालाब तथा समुद्र में प्रवाहि कर दिया जाता है।

मुझे गतवर्ष आगरा किसी कार्यक्रम में जाना था जीवन में पहली बार हिन्दू जाति की मूर्खता को देखा कई घण्टे सड़के जाम हो गईं एक पार्टी बढ़े तो दूसरी आ जाये शराब पीकर नाचते हुए गुलाल लगाकर किसी को परेशानी नहीं देख रहे थे मानो प्रतियोगिताएं हो रही थीं। प्रतिवर्ष संख्या बल बढ़ेगा–फिर विश्व कर्मा पूजा–फिर दुर्गापूजा विर्जन पीछे किसी विदेशी अखबार ने लिखा था "भारत में भगवानों की दुर्दशा" किसी का हाथ टूट गया, किसी का सूँड टूट गया था बेचारे पड़े वहीं पर कराह रहे थे घर कैसे जायें? आये कहाँ से बप्पा? जायेगें कहाँ? कुछ भी तो समझ में नहीं आता अरे! इतना खर्च करके चार दिन के लिए फिर जल प्रवाह क्यों करते हो अपने घर में ही रक्खो क्या रखने से कुछ खर्च बढ़ेगा, विदाई करते हो तो बुलाया क्यों था? हजारों मनोकामना पूर्ण करेंगे ही अतः मेरा सुझाव है सभी से उन्हें घर पर रक्खें अगले वर्ष खरीदने का खर्च भी बच जायेगा और प्रदूषण मुक्त भी होंगे। श्री नरेन्द्र मोदी जी! स्वच्छता पर जोर देने से पहले इस विषय पर विचार करे कितने हजारों करोड़ों रूपये के गणेश–विश्वकर्मा, दुर्गा देवी लगाकर फिर प्रवाहित होती हैं उस विदाई समारोह में एक शादी जैसा खर्च होता है व्यसन और पाप भी बढ़ते हैं शराब पीकर कोई पूजा–साधना अथवा योग करेगा? अतः इस विषय पर सरकारी स्तर पर प्रतिबन्ध लगाकर नदियों की पवित्रता का संकल्प दिलायें। उन्हें बतायें गणेश यह नहीं है गणेश मैं हूँ जो पूरे देश की उन्नति सोचता हूँ। गणेश योगी जी है जो उ०प्र० के हितचिन्तन में रहते हैं जिला स्तर पर डी०एम० ग्राम स्तर पर प्रधान और परिवार स्तर पर घर का मुखिया ही गणेश है उसकी पूजा, माता, पिता, गुरूजनों का सम्मान तथा उनकी आज्ञा का पालन ही उनकी सेवा करना ही सच्ची पूजा है। प्रत्येक कार्य उनकी आज्ञा लेकर करो बस यही गणेश पूजन है। उनका लम्बा नाक उनका सम्मान है, उनके कान सबकी सुनने के द्योतक हैं सबकी समस्या अन्न की अनुशासन की पढ़ाई की व्यवस्था करके भी प्रसन्नता उसके हाथों के प्रतीक हैं सूक्ष्म दृष्टि सबको समान देखना किसी से पक्षपात न करना उसकी आँखे हैं आओ देवदयानन्द के बताये मार्ग का पालन करें। इसी से हमारा आपका कल्याण होगा। कल आपको भी गणेश बनना है उसके लिए अभ्यास करो प्रभो आपको सद्बुद्धि प्रदान करें।

- सम्पादक

गतांक से आगे .....

सत्यार्थ प्रकाश

अथ चतुर्थ समुल्लासारम्भः

अथ समावर्त्तनविवाहगृहाश्रमविधिं वक्ष्यामः

प्रश्न– जो किसी के एक ही पुत्र वा पुत्री हो वह दूसरे वर्ण में प्रविष्ट जो जाय तो उसके माँ बाप की सेवा कौन करेगा और वंशच्छेदन होगा क्योंकि उनका अपने लड़के लड़कियों के बदले स्ववर्ण के योग्य दूसरे सन्तान विद्यासभा और राजसभा की व्यवस्था से मिलेंगे, इसलिये कुछ भी अव्यवस्था न होगी।

यह गुण कर्मों से वर्णों की व्यवस्था कन्याओं की सोलहवें वर्ष और पुरुषों की पच्चीसवें वर्ष की परीक्षा में नियत करनी चाहिये। और इसी क्रम से अर्थात् ब्राह्मण वर्ण की ब्राह्मणी, क्षत्रिय वर्ण की क्षत्रिया, वैश्य वर्ण का वैश्या और शूद्र वर्ण का शूद्रा के साथ विवाह होना चाहिए। तभी अपने–अपने वर्णों के कर्म और परस्पर प्रीति भी यथायोग्य रहेगी। इन चारों वर्णों के कर्त्तव्य कर्म और गुण ये हैं–

अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा।
दानं प्रतिगहश्चैव ब्राह्मणानामकल्पयत्।।१।।
शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्मस्वभावजम्।।२।। भ० गी०।।

ब्राह्मण के पढ़ना, पढ़ाना, यज्ञ कराना, दान देना, लेना ये छः कर्म हैं परन्तु 'प्रतिग्रहः प्रत्यवरः' मनु० अर्थात् प्रतिग्रह लेना नीच कर्म है।। १।। (शमः) मन से बुरे काम की इच्छा भी न करनी और उस को अधर्म में कभी प्रवृत्त न होने देनाः (दमः) श्रोत्र और चक्षु आदि इन्द्रियों को अन्यायाचरण से रोक कर धर्म में चलाना, (तपः) सदा ब्रह्मचारी जितेन्द्रिय होके धर्मानुष्ठान करना, (शौच)–

अद्भिर्गात्रादि शुध्यन्ति मनः सत्येन शुध्यति।
विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति।। मनु०।।

जल से बाहर के अंग, सत्याचार से मन, विद्या और धर्मानुष्ठान से जीवात्मा और ज्ञान से बुद्धि पवित्र होती है। भीतर के राग, द्वेषादि दोष और बाहर के मलों को दूर कर शुद्ध रहना अर्थात् सत्यासत्य के विवेकपूर्वक सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग से निश्चय पवित्र होता है। (क्षान्ति) अर्थात् निन्दा स्तुति, सुख दुःख, शीतोष्ण, क्षुधा तृषा, हानि लाभ, मानापमान आदि हर्ष शोक, छोड़ के धर्म में दृढ़ निश्चय रहना। (आर्जव) कोमलता, निरभिमान, सरलता, सरलस्वभाव रखना, कुटिलतादि दोष छोड़ देना। (ज्ञानम्) सब वेदादि शास्त्रों को साङ्गोपाङ्ग पढ़ने पढ़ाने का सामर्थ्य, विवेक सत्य का निर्णय जो वस्तु जैसा हो अर्थात् जड़ को जड़ चेतन को चेतन जानना और मानना। (विज्ञान) पृथिवी से लेके परमेश्वर पर्य्यन्त पदार्थों को विशेषता से जानकर उन से यथायोग्य उपयोग लेना। (आस्तिक्तय) कभी वेद, ईश्वर, मुक्ति, पूर्व परजन्म, धर्म, विद्या, सत्संग, माता, पिता, आचार्य, और अतिथियों की सेवा को न छोड़ना और निन्दा कभी न करना। ये पन्द्रह कर्म और गुण ब्राह्मण वर्णस्थ मनुष्यों में अवश्य होने चाहिए।।२।। क्षत्रिय–

प्रजानां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च।
विषयेष्वप्रसक्तिश्च क्षत्रियस्य समासतः।।१।। मनु०।।
शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम्।
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम्।।२।। भ० गी०।।

न्याय से प्रजा की रक्षा अर्थात् पक्षपात छोड़ के श्रेष्ठों का सत्कार और दुष्टों का तिरस्कार करना सब प्रकार से सब का पालन (दान) विद्या, धर्म की प्रवृत्ति और सुपात्रों की सेवा में धनादि पदार्थों का व्यय करना (इज्या) अग्निहोत्रादि यज्ञ करना वा कराना (अध्ययन) वेदादि शास्त्रों का पढ़ना और विषयों में न फंस कर जितेन्द्रिय रह के सदा शरीर और आत्मा से बलवान् रहना।।१।।

(शौर्य्य) सैकड़ों सहस्त्रों से भी युद्ध करने में अकेले को भय न होना। (तेजः) सदा तेजस्वी अर्थात् दीनतारहित प्रगल्भ दृढ़ रहना। (धृति) धैर्यवान् होना (दाक्ष्य) राजा और प्रजासम्बन्धी व्यवहार और सब शास्त्रों में अति चतुर होना। (युद्धे) युद्ध में भी दृढ़ निःशंक रहके उस से कभी न हटना न भागना अर्थात् इस प्रकार से लड़ना कि जिस से निश्चित विजय होवे, आप बचें, जो भागने से वा शत्रुओं का धोखा देने से जीत होती हो तो ऐसा ही करना। (दान) दानशीलता रखना। (ईश्वरभाव) पक्षपातरहित होके सब के साथ यथायोग्य वर्त्तना, विचार के देवे, प्रतिज्ञा पूरा करना, उस को कभी भंग होने न देना। ये ग्यारह क्षत्रिय वर्ण के गुण हैं।।२।। वैश्य–

क्रमशः अगले अंक में .....

समाज सेवा के लिए समर्पित व्यक्तित्व.....

धरोहर...

स्वामी सेवानन्द ओमाश्रित श्री

प्रातः कालीन सूर्य की आभा से युक्त प्रतिभाशाली, काषायवस्त्रधारी, शरीर बलशाली वाणी की गम्भीरता, मुखमण्डल पर तेज एवं प्रसन्नता से परिपूर्ण हास्य से सभी को अपना बनाने का सामर्थ्यशाल व्यक्तित्व थे स्वामी सेवानन्द जी ओमाश्रित आप मूलरूप से बिहार राज्य में पैदा हुए लेकिन बाल्यकाल से ही पूर्व जन्म का संस्कार था कि उ०प्र० में आकर शिक्षा ग्रहण करके महर्षि दयानन्द जी सरस्वती के विचारों से प्रभावित हो गए अपनी चढ़ती हुई युवावस्था को भोग–विलास से दूर हटकर आने वाली पीढ़ी के निर्माण का संकल्प ले लिया संकल्प के धनी स्वामी जी ने सेवा करने की भावना से सीधे सन्यास आश्रम में प्रवेश किया और सेवानन्द नाम लेकर प्रभु को उपासना–साधना में शेष समय का सदुपयोग किया इसलिए साथ में ओमाश्रित लगाने लगे। आपने रामपुर जनपद को केन्द्र बनाकर धमोरा, मिल्क, बरेली, शाहजहाँपुर, तिलहर, मुराबाद, मुण्डा पाण्डेय, अमरोहा, बिजनौर तक कार्य क्षेत्र को फैलाया। आपकी विशेषता यह रही कि जहाँ भी जाते–बच्चों को नैतिक शिक्षा, योगासन सिखाते, गायत्री मन्त्र सिखाकर माता–पिता को प्रातः सायं नमस्तेकरो फिर आर्यवीर दल की शाखा के रूप में एक बच्चों की टोली तैयार करते उनके माता–पिता आकर कहते स्वामी जी हमारे घर आओ भोजन स्वीकार करो तो कहते कि मैं बिना यज्ञ किये भोजन नहीं करता जब वे यज्ञ कराते तो उन्हें यज्ञोपवीत देकर उपदेशक करते और उसे सच्चा आर्य बना लेते भोजन करके फिर पुनः आने का निमन्त्रण देते ऐसे ही सम्पर्क करते–करते वे कितने लोगों के अपने बन गए, उसका जीता–जागता प्रमाण मैंने आर्य इण्टर कालेज मिलक रामपुर में ३ अगस्त २०१७ को इस वर्ष उनके प्रेरणा दिवस पर साक्षात् अनुभव किया। उनको दिवंगत हुए २० वर्ष हो गए हैं २० वर्ष पर पश्चात् उनके प्रति लोगों की आस्था और श्रद्धा देखकर मैं अभिभूत हो गया। मुझे लगा कि लोग अपने परिवार में अपने पूर्वजों की पुण्यतिथि कुछ वर्षों के बाद भूल जाते हैं या उसे उपेक्षित समझ लेते हैं लेकिन स्वामी सेवानन्द जी को निरन्तर एक वर्ष में उत्साह पूर्वक पर्व की तरह लोग श्रद्धा से याद कर रहे हैं यह उनकी तपस्या और पुरुषार्थ का ज्वलन्त उदाहरण है। वे ५० वर्ष इस क्षेत्र में रहे ५० वर्षों में २ पीढ़ियाँ तैयार होती है और अब तीसरी पीढ़ी चल रही है उनके कार्य करने का तरीका ग्रामीण स्तर से प्रारम्भ हुआ छोटी–छोटी इकाइयाँ बनाईं फिर तहसील स्तर पर गठन किया उनके प्रचार का तरीका क्रमबद्ध तरीके से रहता था एक ग्राम से दूसरे ग्राम में जाना वहीं से आगे बढ़ते हुए जिला पूरा कर देना फिर क्रमशः सभी समाजों से सम्पर्क करना उनके अभ्यास में आ गया था, वे आर्यवीर दल के नाम से बच्चों के शिविर लगाना, स्कूल एवं कालेजों में जाकर सदुपदेश देना– शिक्षक वर्ग को भी सदा प्रेरणा देते रहना उनकी दिनचर्या बन गई थी। उनका अपना कोई, आश्रम अथवा संस्था नहीं थी लेकिन उन्होंने जगह–जगह स्कूलों की स्थापना की आर्य समाजों की स्थापना की, स्थाई भाव से कहीं भी नहीं रहे सदैव सच्चे सन्यासी की तरह चरैवैति–चरैवैति के नियम को अपनाया और सभी को अपना बनाया। जो एक बार आपसे मिल गया वही आपका अपना हो गया इसी क्रम से आपका परिवार ५ जिलों में विस्तृत हो गया। रामपुर जिला आपकी पहिचान बन गया था १९५६ में आप हिन्दी रक्षा आन्दोलन में गए तथा क्षेत्र के आर्यों को लेकर जेल में रहे फिर १९६६–६७ में गोरक्षा आन्दोलन में भी क्षेत्र का नेतृत्व किया। उसी का प्रभाव भविष्य में लाभकारी सिद्ध हुआ आपने पूरे क्षेत्र में घूम–घूम कर गोरक्षा के लिए एक वातावरण तैयार किया और आर्यों में जागृति पैदा की।

स्वामी जी ने कई वर्ष पूर्व मुझे धमौरा एक आर्य वीरदल के शिविर में भी बुलाया था। एक बार भदासना, मुण्डापाण्डे श्री महावीरसिंह जी मुमुक्षु के ग्राम में भी शिविर लगाया था तब भी स्वामी जी के दर्शनों का लाभ मिला था; स्वामी जी आर्य समाज के प्रचार–प्रसार में सदैव समर्पित भाव से कार्य करते रहे आपने कोई मान–प्रतिष्ठा, धन सम्पदा की आरे ध्यान नहीं दिया। श्री सुखदेव जी शास्त्री जो सम्प्रति इण्टरकालेज के प्रधानाचार्य पद से अवकाश प्राप्त हैं बता रहे थे कि मुझे जो संस्कार दिया हैं आपने पुत्र–शिष्य की तरह मुझे संवारा और संस्कारित किया सदैव शिक्षा और संस्कार निर्माण पर ध्यान देते थे। श्री पाल सिंह जी और ओमप्रकाश जी आर्य, आर्पेन्द्र जी आर्य जैसे कितने उनके शिष्य है जो आज आर्य समाज के अधिकारी बनकर कार्य कर रहे हैं। उनके प्रेरणा दिवस पर आई आर्य जनता से ही अनुमान लगा लिया था कि ये इस क्षेत्र के स्वामी श्रद्धानन्द जी सन्यासी की तरह हैं आर्य जगत् में उन्हें भी ऐसा ही सम्मान मिला है। वे पद–प्रतिष्ठा से ऊपर उठकर कार्य में विश्वास रखते थे ग्रामीण क्षेत्र में गुरूकुल रठोण्डा से लेकर मिलक तक विभिन्न ग्रामों में आर्य जनता, माताएं एवं बच्चों का उत्साह इस बात की पुष्टी कर रहा था कि स्वामी सेवानन्द जी अमर हो गए हैं वे हजारों घरों में आकर प्रत्येक आर्य के लिए प्रेरणा पुञ्ज बन गए हैं। आर्य समाज के इतिहास के ये स्वर्णिम अध्याय है जिन्होंनें अपने खून से इतिहास लिखा है जो हमारे लिए मरमरकर जिन्दा हुए हैं जो वैदिक धर्म की रक्षा सेवा और प्रचार को ही अपना चिन्तन समझते रहे हैं। उनके प्रति पूरा क्षेत्र श्रद्धा से स्मरण करता है यह आर्य जगत् के लिए गौरव की बात है हमारे लिए प्रेरणा पुञ्ज स्वामी सेवानन्द जी सदैव प्रेरणा प्रदान करते रहेगें।

स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
मंत्री, आर्य प्रतिनिधि सभा
उ०प्र०, लखनऊ
मो० : ९८३७४०२१९२

मैं तो रामपुर जिला आर्य प्रतिनिधि सभा के अधिकारियों से विशेष निवेदन करना चाहता हूँ कि समय बलवान है आपके बाद की पीढ़ी के संस्कार रहे या न रहें आधुनिकता निरन्तर प्रभावी होती जा रही है उनके इतिहास को एक स्मारिका के रूप में प्रेरणाप्रद संस्मरण संगृहीत करें और उसे प्रकाशित करायें जो भी पढ़ेगा भावी पीढ़ी उसी से प्रेरणा लेकर इस प्रेरणा दिवस को प्रति वर्ष और प्रभावशाली बनाया जाये। भाषण प्रतियोगिता और भी उनके नाम से चल विजयो पहार स्थापित किया जाये। सन्ध्या यज्ञ की पुस्तकों में उकना परिचय छपवाया जाये उसे जनता में वितरित किया जाये। आर्य समाज मन्दिरों एवं आर्य विद्यालयों में उनका चित्र लगवाया जाये। सभा के इतिहास में भी हम उनका नाम आर्य सन्यासी की श्रेणी में प्रतिष्ठित करेंगें।

''स्वामी सेवानन्द पुरस्कार'' नाम से भी आर्य समाज के सन्यासी अथवा आर्य समाज के उपदेशकों को सम्मानित करते की योजना बनाई जायेगी। आर्य जगत् के सभी सन्यासी, विद्वान्, उपदेशक इस विषय में सुझाव प्रेषित करेंगे। आर्यविद्वत्सहायता निधि की स्थापना उ०प्र० सभा द्वारा की जा रही है उसमें भी आपके निरन्तर सहयोग की आवश्यकता हैं। प्रतिवर्ष निधि से प्राप्त आय को सम्मन एवं सहायता में व्यय किया जायेगा। आर्य समाज के श्रेष्ठी, समाज–सेवी, अधिकारी एवं प्रतिनिधि सभाओं के अधिकारी इसमें हमारा उत्साह बढ़ायेगें ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है।

अन्त में अपने गुरूकुल परिवार एवं आर्य प्रतिनिधि सभा उ०प्र० की ओर से स्वामी जी के प्रति श्रद्धाभाव समर्पित करते हुए प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि हमें भी वेद प्रचार के लिए ऐसी ही शक्ति प्रदान करो। जिससे महर्षि के स्वप्नों का आर्य समाज बना सकें।

परिश्रम हमारे जीवन में प्रयोजनात्मकता लाता है

– रणधीर शास्त्री
जगृति विहार, मेरठ

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतसमाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।।

अर्थ– इस संसार में कर्म करते हुए तू सौ वर्ष तक जीने की इच्छा कर। हे मनुष्य! इस प्रकार और इसके अतिरिक्त कोई रास्ता नहीं है– तुझमें कर्म लिप्त नहीं होगें।

कर्म प्रधान विश्व कर राखा,
जो जस कीन तो तस फल चाखा।

मनुष्य संसार में परिश्रम करने के लिए उत्पन्न हुआ है, यह संसार कर्मक्षेत्र है, यहाँ पर कर्म करते रहने में ही जीवन है। कर्म का त्याग मृत्यु है। जीवन–संग्राम के लिए हमें पग–पग पर श्रम करने की आवश्यकता रहती रहती है। दुकानदार अपनी दुकानदारी, ठेकेदार अपनी ठेकेदारी, विद्यार्थी अपनी दिनचर्या बिना परिश्रम के नहीं चला सकते। यही बात प्रत्येक व्यवसायी पर घटती है। सर्वत्र परिश्रम ही अपेक्षित है। जो व्यक्ति परिश्रम को छोड़ बैठता है वह आलसी और प्रमादी हो जाता है। उसकी उन्नति का मार्ग बन्द हो जाता है। शरीर की उन्नति के लिए व्यायाम के परिश्रम की निरन्तर आवश्यकता है। मन की उन्नति के लिए अध्ययन और अध्यापन का परिश्रम करना पड़ता है। समाज और राष्ट्र की उन्नति के लिए भी इसी प्रकार कठिन परिश्रम करना पड़ता है।

सभ्यता के जितने चिन्ह आज हमको दिखाई देते हैं, वे सब परिश्रम के पसीने से ही प्राप्त हुए हैं। प्रकृति के रहस्यों को जानने के लिए तथा उसकी शक्तियों पर अधिकार जमाने के लिए वैज्ञानिकों को बड़े–बडे उद्योग करने पड़े हैं। अग्नि, भाप, विद्युत आदि शक्तियों को काम में लाने के लिए जो–जो परिश्रम मनुष्यों ने किए हैं, वे सब इतिहास के पृष्ठों को मनोरंजक पाठ बन रहे हैं। रेल, तार, हवाई जहाज इत्यादि आविष्कार जिनके द्वारा मनुष्यों ने समय और सथान की दूरी को दूर कर दिया है वे सब परिश्रम का ही फल हैं जिन व्यक्तियों ने तथा जिन जातियों ने परिश्रम के मार्ग का अवलम्बन छोड़ दिया है वे सब निश्चय से ही मृत–प्रायः हो गई हैं। अतः आओ हम परिश्रमी बनें और इसके स्वादु फल का आस्वादन करें।

परिश्रम के प्रकार– मनुष्य की आवश्यकताएं अनेक प्रकार की हैं, अतः उनकी पूर्ति के लिए भिन्न–भिन्न प्रकार का परिश्रम करना पड़ता है। कई लोगों को जंगलों में परिश्रम करना पड़ता है, कईयों को नगरों में। एक कृषक है, तो दूसरा मेमार। एक सुनार है, तो दूसरा लोहार। एक दर्जी है तो दूसरा दुकानदार। तात्पर्य यह है कि अनेक व्यवसायी मिलजुलकर कर ही मनुष्य को सुखी बना रहे हैं। जिनमें बाहुबल है वे शारीरिक उद्योग कर रहे हैं। जिसमें मनोबल है वे मस्तिष्क परिश्रम द्वारा समाज–सेवा कर रहे हैं। सारांश यह है कि जो जिस परिश्रम के योग्य है, उसी में दत्तचित्त होकर उसे व्यग्र होना चाहिए।

संसार में कोई कार्य अथवा व्यवसाय ऐसा नहीं, जो मनुष्य को गिराने वाला हो। मनुष्य उठता और गिरता अपने भावों से है। अमरीका का एक महापुरुष जीवन के प्रारम्भ में जूते गाँठ कर अपनी आजीविका पैदा करता है। उसका कथन है, कि जूते गाँठना बुरा नहीं, परन्तु जूतों को बुरी तरह गाँठना बुरा है। हमें यह कदापि न भूलना चाहिये कि सब प्रकार का परिश्रम उत्तम है यदि हम उत्तम भावों से प्रेरित होकर उसे करें। कोई कार्य घृणित नहीं, यदि कोई पदार्थ घृणित है, तो वह प्रमाद और आलस है। इनसे हमें सदैव बचना चाहिए।

परिश्रम के लाभ–

१. परिश्रम का सबसे बड़ा लाभ तो यही है कि इसके द्वारा हम अपनी आजीविका की सिद्धि करते हैं। जीवन निर्वाह के सब पदार्थ इसी उद्योग द्वारा उपलब्ध होते हैं। जो लोग परिश्रम से जी चुराते हैं वे भूखे मरते हैं वे दूसरों पर भार बनते हैं, और तिरस्कृत होते हैं।

पराधीन सपनेहु सुख नहीं,
कर विचार देखो मन माहीं।
सर्वं परवशं दुःखम् सर्वमात्मवशं सुखम्।
एतदेव समा–सेन लक्षणं सुखदुःखयोः।।

३. परिश्रम द्वारा जहाँ हम स्वयं स्वतंत्र बनते हैं और अपनी सहायता करते हैं वहाँ हमें इसी के द्वारा दूसरों की सहायता का अवसर और सामर्थ्य प्राप्त हो सकता है। बच्चों के परिश्रम से उनके माता–पिता के सुख की वृद्धि होती है। वैज्ञानिकों के परिश्रम से अनेकों का भला होता है। परिश्रम के साथ स्वार्थभाव को कदापि न जोड़ना चाहिए। हमारे परिश्रम ये यदि दूसरों को लाभ नहीं पहुँचता तो वह हीन परिश्रम है और हमें मलिन बना देता है। हमें दूसरों के लिए जीना चाहिए क्योंकि ऐसे जीवन में ही सुख और आनन्द मिलता है।

मरना भला है उसका जो अपने लिए जिए।
जीता है वह जो मर चुका इन्सान के लिए।।

४. परिश्रम से हमारा शरीर बलिष्ठ बनता है और मानसिक शक्तियों का विकास होता है। आलसी मनुष्य का शरीर और मन रोगों का घर बन जाता है। वह सदैव दुःखी रहता है। दुःखों से पीड़ित होकर वह दूसरों के कष्ट का कारण बनता है।

५. परिश्रम हमारे जीवन में प्रयोजनात्मकता लाता है। क्योंकि इसके द्वारा हम अपनी निश्चित धुन की साधना करते हैं। प्रयोजन–शून्य जीवन निरर्थक होता है। उसकी स्थिति तिनके के समान डाँवाडोल रहती है। परिश्रम हमारी शक्तियों को एकत्रित करता है और उन्हें प्रयोजन की सिद्धि में लगाता है।

६. परिश्रम द्वारा हम अपने खाली समय को भी उपयोगी बना सकते हैं और अनेक कुकर्मों से बचते हैं जिनका खाली समय में विचार आता है। अपराधी मनुष्य अधिकांश अपराध में इसीलिये पड़ते है कि वे अपने सन्मुख काई निश्चित परिश्रम हनीं देखते। दर दर भीख मांगने वाला भिखारी भी इसी मर्ज का मरीज होता है।

७. परिश्रम द्वारा दूसरों की दृष्टि में हम आदरणीय बनते हैं। परिश्रमी मनुष्य सर्वत्र प्रतिष्ठित समझा जाता है। विपरीत इसके आलसी सदा और सर्वत्र अपमानित होते हैं।

८. संसार के बड़े–बड़े पद और अधिकार केवल परिश्रमियों के ही भाग्य में आते हैं। आज जो हमें नेता और उच्च पदाधिकारी नजर आते हैं वे कल परिश्रम की सीढ़ियों पर चढ़े रहे थे और निरन्तर परिश्रम द्वारा ही उन्होंने अपनी वर्तमान प्रतिष्ठा की स्थापना की है।

बिन उद्यम के कामना, कभी न पूरण होत।
उद्यम जीना जानिए, आलस जानिये मौत।।

आलस्य के दुष्परिणाम– परिश्रम के लाभों का वर्णन करते हुए आलस्य के दुष्परिणाम अपने आप सूझने लग जाते हैं। तथापि बालकों को यह स्मरण रखना चाहिए कि आज जो हमारे देश की दुर्गति हो रही है, उसका अधिकांश कारण भारतवासियों के आलस्य और परिश्रम का अभाव है। जब से हमारी जाति ने उद्योग से मुँह मोड़ा है, तभी से हमारी जाति भिखमंग्गों की जाति बन रही है। बावन लाख साधु जो दर–दर घूमकर अपने प्रमाद का प्रचार कर रहे हैं, यह आलस्य की मूर्तियाँ यदि प्रमाद छोड़ कर परिश्रम में लग जाएँ तो भारत में कितने बड़े सुधार की सिद्धि हस्तगत हो जाय। यदि भारत की रक्षार्थ अपने बलिष्ठ शरीरों को परिश्रम के अर्पण करें, तो देश का बड़ा भारी हितसाधन हो जाय। अतः हम सबके लिये यह परम आवश्यक है कि हम अपने देश से आलस्य को दूर भगावें। इसका सबसे बड़ा उपाय यह है कि हम स्वयं परिश्रमी बनें, दूसरों को परिश्रमी बनावें। अपने धन का व्यय इस प्रकार के दान में करना चाहिए जिससे दान पाने वाले उद्योगी और परिश्रमी बनावें। अपने धन का व्यय इस प्रकार के दान में करना चाहिए जिससे दान पाने वाले उद्योगी और परिश्रमी बनें। यदि आप भिखमंगे को प्रतिदिन भीख देते रहते हैं तो उसको भिखारी बनाये रखने की जिम्मवारी आप पर है। ऐसे दान का क्या फल जो दूसरों को भीखारी बनावे? यदि आप भिखारी के सन्मुख कार्य उपस्थित कर दें और उसको परिश्रम में लगा देवें तो उसका जीवन स्वावलम्बन का जीवन बन जायगा और उसके परिश्रम से दूसरों का भी लाभ होगा।

कर्ममय जीवन– गीता में श्रीकृष्ण भगवान ने हमें कर्म करने की प्रबल प्रेरणा की है। वेद में स्वयं परमात्मा ने हमें कर्म के लिए बारम्बर उपदेश दिया है। वैदिक जीवन वस्तुतः कर्मयोग का जीवन है। हमारे जीवन को वेद भगवान चार भागों में विभक्त करते हैं।

ऐतिहासिक चिन्तन -

कर्ण के जन्म की पड़ताल

– जगदीश प्रसाद हरित

कर्ण महाभारत का प्रमुख पात्र है। वह दुर्योधन का परम विश्सनीय अन्तरंग मित्र है। उसी के शब्दों में–

वसुदेवसुतो यद्वत् पाण्डवाय दृढ़व्रतः।
वसु चैव शरीरं च पुत्रदारं तथा यशः।।
सर्वं दुर्योधनस्यार्थे त्यक्तं वै भूरिदक्षिणः।

अर्थात् हे भीष्मजी! जिस प्रकार दृढ़प्रतिज्ञ श्री कृष्ण अर्जुन के लिए समर्पित हैं उसी प्रकार मेरा मन, तन धन, पुत्र, दारा और यश सब कुछ दुर्योधन के लिये हैं। ये शब्द उसने तब कहे थे, जब पितामह शर– शैय्या पर पड़ चुके थे और कर्ण उनसे भेंट करने रात्रि में गया था। भीष्म जी ने उसे पाण्डवों के साथ मिल जाने का प्रस्ताव किया था और कुन्ती के गर्भ से उसके जन्म की कथा सुनायी थी। उसका उत्तर जिन शब्दों में उसने दिया वे मैत्री के गुणों की उच्चतम सीमा को रेखांकित करने वाले हैं। उसने वाणी से मात्र कहा ही नहीं, जो कहा करके भी दिखाया। भीष्म और द्रोण के धराशायी हुए पश्चात् कौरव सेना का सेनापत्तिव उसे प्राप्त हुआ, तब युद्ध में अर्जुन का मुकाबला करते हुए समरांगण में दुर्योधन के लिये उसने प्राण त्यागे।

कर्ण के जन्म की कथा महाभारत वनपर्व अध्याय ३०३ से ३०६ तक विस्तार से दी गयी है और उसी रूप में वह जन–सामान्य में प्रचलित हैं। संक्षेप में दुर्वासा मुनि के वरदान रूप मन्त्र के प्रभाव से सूर्य द्वारा कुन्ती को कौमार्यावस्था में कर्ण का जन्म हुआ। लोक–लाज के वशीभूत कुन्ती ने शिशु को मंजूषा में रख, रात्रि में गंगा में प्रवाहित कर दिया। आधारित संत ने बहती हुई मंजूषा को देखा और निकाल लिया, इस प्रकार कर्ण को पाया। वह निःसन्तान था, उसने बड़े लाड़–प्यार से उसे पाला–पोसा। युवावस्था में वह आकस्मिक रूप से कौरव सभा में आकर दुर्योधन का परममित्र बन गया। फिर जब महाभारत का संग्राम लड़ा गया तो जिन पाण्डवों के विरूद्ध वह लड़ा, वे उसके सहोदर भाई थे।

कर्ण–जन्म की पूर्वोक्त कथा के तीन साक्ष्य महाभारत में उपलब्ध हैं १. श्रीकृष्ण २. माता कुन्ती ३. पितामह भीष्म। उन सम्बद्ध प्रसंगों पर बुद्धि संगत चर्चा आगे करते हैं

पाण्डवों के वनवास और अज्ञातवास की अवधि समाप्त हो जाने पर युधिष्ठर ने श्रीकृष्ण को अपना दूत बनाकर हस्तिनापुर भेजा कि वे राज्य लौटाने की वार्ता कौरवों से करें। श्रीकृष्ण ने कौरव–सभा में अपना प्रभावशाली वक्तव्य दिया, पर व्यर्थ गया। दुर्योधन ने अपना हठ नहीं त्यागा। विश्वरूप प्रदर्शन के साथ जब सभा से कृष्ण ने प्रस्थान किया तब असफलता ही उनके हाथ लगी थी। लोकाचारवश भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य और कर्ण सहित कौरव पक्ष के राजा कृष्ण को विदा करने उनके पीछे चले। कृष्ण ने कुन्ती के भवन का मार्ग पकड़ा, जो कि हस्तिनापुर में ही थी। कुन्ती से भेंट कर चले तो कृष्ण ने भीमादि सहित कौरव पक्ष के सब राजाओं को तो विदा कर दिया पर कर्ण को अपने रथ पर बैठा लिया और उसके जन्म की वही कथा को उसको सुनाई और कहा कि तुम पाण्डवों के ज्येष्ठ भ्राता हो, राजा तुम बनोगे, युधिष्ठिर सहित सभी पाण्डव तुम्हारी सेवा में होंगे इत्यादि कहकर पाण्डवों से मिल जाने का प्रलोभन दिया। कर्ण ने शिष्टतापूर्वक मना कर दिया। यह कृष्ण की दूसरी विफलता थी।

अब कृष्ण युधिष्ठिर के पास लौट चले। इधर कुन्ती स्वयं जाकर कर्ण से मिली। वह तब पहुँची जब कर्ण प्रातःकाल एकान्त में सूर्योपासना में निमग्र था। उसके निवृत्त होने पर कुन्ती ने कर्ण के जन्म की वही कथा दोहराते हुए पाण्डवों से मिल जाने की प्रेरणा की। कर्ण ने पुनः दृढ़ता पूर्वक अस्वीकार कर दिया, इतना आश्वासन अवश्य दिया कि हे माता! मेरा लक्ष्य मात्र अर्जुन है। या तो मैं उसे मारूंगा अथवा वह मुझे। तुम्हारे शेष पुत्रों को मैं नहीं मारूंगा।

अब सहज रूप से एक प्रश्न तो यह उठता है कि कृष्ण ने सब कौरव राजाओं को लौटाकर कर्ण से ही यह एकान्त वार्ता क्यों की? दूसरा यह कि सन्धि–वार्ता सर्वथा विफल हो जाने पर कृष्ण और फिर कुन्ती कर्ण के प्रति बहुत त्वरा दिखाते हैं। 'अत्युपचारः शंकितव्यः। यहाँ सन्देह होना स्वाभाविक है। विफल मनोरथ श्रीकृष्ण को युधिष्ठर के समक्ष अपना दौत्य प्रतिवेदन देना है तो बड़ी विफलता के बीच में से छोटी सफलता की तलाश का यह प्रयास क्यों नहीं हो सकता। एक कल्पित कथा के द्वारा अज्ञात–जन्मा महारथी को दुर्योधन से तोड लेना दुर्योधन को पर्याप्त दुर्बल कर देता।

यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि श्रीकृष्ण सर्वतो भावेन पाण्डवों के हितैषी थे, इसे कर्ण भी जानता था– जैसा कि लेखक ने प्रारम्भ के उसी के कथन से प्रकट किया है। पुनः यह ज्ञातव्य है कि श्रीकृष्ण दूत के रूप में कौरव सभा में पहुँचने के पूर्व हिस्तनापुर में ही पहले बुआ कुन्ती से मिल चुके थे। इसे अनदेखा नहीं किया जा सकता। कुन्ती ने विस्तार से अपना दुखड़ा सुनाया था, वहां कर्ण की कोई चर्चा नहीं है। तो भी इस एकान्तिक वार्ता में भावी सम्भावित असफलता की दशा में एक दांव कुन्ती के द्वारा लगाने की योजना तब क्यों नहीं बन सकती? सन्देह इस कारण अधिक गहरा जाता है कि कृष्ण और कुन्ती द्वारा कर्ण की ये मान–मनौतियां युद्ध के मुहाने पर की जा रही हैं। सन्धि–प्रस्ताव ठुकराया जा चुका था, शान्ति की कामना धूल चाट गई थी, युद्ध के सिवाय कोई मार्ग नहीं, पाण्डवों के प्राणों पर आसन्न संकट मंडरा रहा है। भले ही पाण्डव दुर्धर्ष वीर हों, युद्ध में जय–पराजय, जीवन–मरण सुनिश्चित नहीं होता। तभी तो श्रीकृष्ण मात्र पाँच ग्राम लेकर भी शान्ति के लिए तत्पर थे, पर दुर्योधन ने इसे पाण्डवों की कायरता ही समझा और अन्त तक वह 'वीर–भोग्या वसुन्धरा' का उपासक बना रहा। ऐसे में कृष्ण जैसा नीति–निपुण, कुन्ती जिसकी बुआ और पाण्डव भाई हों, इतना तो कर ही सकता था।

युधिष्ठिर के समक्ष प्रस्तुत किये गये प्रतिवेदन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उनका दौत्य–कर्म कोरी औपचारिकता नहीं थी। साम, दाम, दण्ड, भेद सब नीतियों का उन्होंने पूरा–पूरा प्रयोग किया। उन्हीं के शब्दों में–

साम–पुनः सामाभिसंयुक्तं सम्प्रदानमथाब्रुवम्।
अभेदात्कुरुवंशस्य कार्ययोगात् तथैव च।।
उद्योग. ३१–५
सर्वं भवतु ते राज्यं पञ्चग्रामान् विसर्जय।।
उद्योग. ३१–६
भेद–पुनर्भेदश्च मे युक्तो यदा साम न गृह्यते।।
उद्योग. ३१–४
तदा मया समीनीय भेदिताः भेदिताः सर्व पार्थिनः।।
दण्ड– एवमुक्तोऽपिदुष्टात्मा नैव भागं व्यमुञ्चत।
दण्डं चतुर्थं पश्यामि तेषु पापेषु नान्यथा।।

दड का प्रयोग तो अन्त में ही किया जाता है, जो युद्ध के रूप में सामने तो अन्त में ही किया जाता है, जो युद्ध के रूप में सामने आने वाला था। सभा से निकलते हुए दुर्योधन पर अपन अति–मानवीय प्रभाव डालने के लिये श्रीकृष्ण ने विश्वरूप का भी प्रदर्शन किया था। वे युधिष्ठिर से कहते हैं–

अद्भुतानि च घोराणि दारूणानि च भारत।
अमानुषाणि च कर्माणि दर्शितानि मया विभो।
अभेदात् कुरुवंशस्य कार्य योगात् तथैव च।।
–उद्योग. ३१–५

साम–नीति के प्रयोग में सौभ्राह को सद्भावपूर्वक समझा दिया, दाम–जब राज्य देकर पाँच गाँव पर सन्तुष्ट हो गए, दण्ड के अन्तिम विकल्प युद्ध की चुनौती दे दी परन्तु भेद–नीति का प्रयोग कहाँ किया यह विचारणीय है। भेद अर्थात् फूट डालना, शत्रु के पक्ष में से किसी को तोड़कर कमजोर करना।

उसका प्रयोग कर्ण के अतिरिक्त किसी और किया हो ऐसा महाभारत में देखने को नहीं मिलता। कर्ण के जन्म की कथा को यथावत् मान लेने पर तो माना जायेगा कि भेद नीति का प्रयोग ही कृष्ण ने नहीं किया। पर कृष्ण तो भेदनीति के प्रयोग का डंका स्वयं पीट रहे हैं, तो यह कर्ण पर ही फलित हो सकता है। जो कृष्ण कर्ण को उसकी जन्म कथा सुनाते हुए उसे पाण्डवों का भाई कह रहे थे, वे ही युधिष्ठर को अपना प्रतिवेदन देते हुए पुनः उसे राधेय ही कह गये– 'राधेयं भीषयित्वा च सौबलं च पुनः पुनः।' इसी को कहते हैं जादू, वह जो सिर पर चढ़कर बोले।

अब कुन्ती कुन्ती साक्ष्य पर थोड़ा और विचार कर लें। कुन्ती ने कर्ण से मिलकर जब उसे अपना पुत्र का तो कर्ण उस कथा के परीक्षण और विवाद में नहीं पड़ा, ना उलझा, पर प्रकारान्तर से उसके मातृत्व पर ही प्रश्नचिन्ह लगा दिया–

न वै मम हितं पूर्वं मातृवच्चेष्टितं त्वया।
सा मां सम्बोधयस्यद्य केवलात्महितैषिणी।।
उद्योग. ३०–२७

अर्थात् तुमने इससे पूर्व तो माता के समान मेरे हित की कोई चेष्ठा नहीं की, वही तुम मुझको अब जो कह रही हो तो केवल स्वार्थी होकर ही। कर्ण के इस कथन में कुछ असंगत भी नहीं। गंगा में विसर्जित कर देने के पश्चात् कभी उसने पश्चाताप के दो आंसू उसके हेतु गिराये? और जब कर्ण युवा होकर दुर्योधन का मित्र बन कौरव सभा में सम्मान पा रहा था, तब कभी खुशी का रोमांच उसे हुआ? महाभारत में युद्धपूर्व का कोई ऐसा प्रसंग उपलब्ध नहीं होता जब उसे अपने परित्यक्त पुत्र की स्मृति आई हो। अपने स्वयं के, पाण्डवो के और द्रोपदी के कष्टों का स्मरण कर कुन्ती बार–बार तड़प उठती है, पर कर्ण सदैव ओझल ही रहा और जब युद्ध मुंह बाए सामने खड़ा है और दोनों पक्ष एक–दूसरे की जान के प्यासे बने खड़े है, ऐसे में कर्ण के प्रति कुन्ती का मातृत्व अकस्मात् कैसे जग उठा?

कर्ण के जन्म की कथा के तीसरे साक्ष्य पितामह भीष्म हैं। कौरव सेना के प्रथम सेनापति भीष्म जब बाणों से छलनी हुए शर–शैय्या पर पड़े थे, वहाँ रात्रि के समय कर्ण उनसे भेंट करने आया। औपचारिकताओं के पश्चात् पितामह ने उससे जो कुछ कहा, उसका संकेत लेख के प्रारम्भ में आ चुका

शेष पृष्ठ – ६ पर

बोध कथा -

जीवात्मा की कहानी

– आदित्य प्रताप सिंह

आत्मा क्या है? इसके सम्बन्ध में महिर्ष नारद की सुनाई एक कहानी सुनिये। पुरंजन नाम का राजा था किसी समय में। एक बार उसे इच्छा हुई कि किसी नगर में जाकर रहूँ। कई नगर उसने देखे, कोई भी उसे पसन्द नहीं आया। तब हिमालय के दक्षिण में उसने एक नौ द्वारों वाली नगरी देखी। यह भी देखा की उस नगरी में एक सुन्दरी भी रहती है। पाँच फन वाला एक सर्प सदा उसकी रक्षा करता है। उस स्त्री ने भी पुरंजन राजा को देखा। दोनों एक–दूसरे को देखते ही एक–दूसरे पर मोहित हो गये। पुरंजन राजा उस नगरी में गया। उस स्त्री ने उसको अपना स्वामी बना लिया। दोनों इस नगरी में रहने लगे। रहते–रहते वर्षों व्यतीत हो गए। इनके कितने ही बच्चे भी हुए। तब अन्त में पुरंजन राजा का शरीर ढीला होने लगा। कितने ही रोगों ने उसे दबा लिया। तब एक दिन दुःखी होकर उसने नगरी छोड़ दी।

यह सारी कथा वास्तव में आत्मा की कहानी है, क्योंकि पुरंजन राजा कोई दूसरा नहीं, यही आत्मा है और नौ द्वारों वाली जिस नगरी में आकर उसने निवास किया, वह नौ द्वारों और आठ चक्रों वाला यह मानव–शरीर है। वेद भगवान् ने इस नगरी का वर्णन करते हुए कहा–

अष्ट चक्रो नव द्वारा देवानां पूरयोध्या।
तस्यां हिरण्ययः कोशः स्वर्गो ज्योतिषावृतः।।

आठ चक्रों और नौ द्वारा वाली यह वह पुरी है, जिसे कोई जीत नहीं सकता। इसमें एक चमकते हुए प्रकाश में परमात्मा के प्रकाश से आवृत वह आत्मा बैठा रहता है, जो अपने–आप में सुख–रूप है।

जिस नगरी का वेद भगवान् ने वर्णन किया है, वह मनुष्य का यह शरीर है। इसके नौ द्वार हैं– दो आँखें, दो कान, दो नथुने, एक मुख और दो मल और मूत्र त्यागने के द्वार। यह हैं नौ द्वारों वाली आयोध्या नगरी। इसमें आठ चक्र हैं– मूलाधार चक्र, स्वाधिष्ठान चक्र, मणिपूरक चक्र, अनाहत चक्र, हृदय चक्र,विशुद्धि चक्र, आज्ञाचक्र, ब्रह्मचक्र। इस नौ द्वारों और आठ चक्रों वाली नगरी में बुद्धि नामक सुन्दर स्त्री रहती है। दस इन्द्रियां उसके दस सेवक है। और पांच प्राण–पाँच फनों वाला वह सर्प है, जो इस नगरी की रक्षा करता है।

इस नगरी में आया है वह पुरंजन राजा–वह जीवात्मा और जब इस नगरी को छोड़कर निकला तो विदर्भ के राजा के नगर में जाकर एक कन्या के रूप में उत्पन्न हो गया। वह कन्या बहुत रूपवती और गुणवती थी। विदर्भ के राजा ने उसका नाम रखा अपूर्व कन्या। यह बड़ी हुई तो मलयध्वज नाम के राजा के साथ इसका विवाह हो गया। दोनों सुख से रहने लगे। परन्तु तभी एक दिन राजा मलयध्वज शीशे में अपना मुख देख रहा थे तो सिर में एक श्वेत केश दिखाई दिया। केश को देखकर वह अपूर्व कन्या से बोले– "रानी! मैं तो अब जंगल में जाकर भगवान् का भजन करूंगा, तुम चाहो तो इस राज्य को चलाओ।"

रानी ने कहा– "आपके बिना मैं कैसे रहूंगी? जहाँ आप, वहीं मैं आपके साथ चलूंगी।" दोनों वन में पहुंचे। आश्रम बनाकर रहने लगे। परन्तु समय तो प्रत्येक स्थान पर व्यतीत होता है, वन में भी बीतने लगा। अन्ततः वह समय भी आया, जब मलयध्वज का देहान्त हो गया। रानी अपूर्व कन्या ने रो–रोकर अपना बुरा हाल कर लिया। वन में और कोई था नहीं। रोते–पीटते उसने वन में से लकड़ियां एकत्रित कीं। एक चिता बनाई। मलय ध्वज की लाश को उसके ऊपर रख दिया। अपने हाथ से उसने चिता

शेष पृष्ठ – ७ पर

पृष्ठ – ५ का शेष

कर्ण के जन्म की ...

है। श्रीकृष्ण और कुन्ती जो कथा पहले उसे समझा चुके थे, वहीं उन्होंने कहा–

कौन्तेयस्त्वं न राधेयो न तवाधिरथः पिता।
सूर्यजस्त्वं महाबाहो विदितो नारदान्मया।।

–भीष्म ३०–६

न द्वेषोऽस्ति मे तात त्वयि सत्यं ब्रवीमि ते।।

–(भीष्म पर्व, अन्तिम अध्याय)

यहाँ पितामह इतना विशेष कह रहें हैं – मुझे यह सब नारद और कृष्ण द्वैपायन व्यास से ज्ञात हुआ है। लेकिन वहीं अगले ही वाक्य में पितामह चूक कर बैठे, कर्ण को सूत–नन्दन कहकर सम्बोधित किया–

अकस्मात् पाण्डवान्सर्वानवाक्षिपसि सुव्रत।
येनासि बहुषो राजा नोदितः सूतनन्दन।।

–भीष्म ३०.१०

अब उनके विरोधाभासी कथनों में किसे सत्य माना जाये? कौरव सभा में पितामह भीष्म और कर्ण के बीच प्रायः तकरार ठनी रहती थी। वे कर्ण को सूत–पुत्र जैसे कटुवचन कहकर प्रताड़ित करते रहते थे, उसको स्वयं पितामह ने स्वीकार किया।

कुलभेद भ्याच्चाह सदा परुषमुक्तवान्।

एक बार तो भीष्म के वाग्बाणों से तिलमिलाया कर्ण अपने शस्त्रास्त्र पटककर ये प्रतिज्ञा करके कि भीष्म के जीतेजी सभा और रणभूमि में पैर न रखूंगा, सभा त्याग कर चला गया।

न्यास्यामि शास्त्राणि न जातु संख्ये,
पितामहो द्रक्ष्यति मां सभायाम्।

महाभारत के प्रथम सेनापति भीष्म जब दुर्योधन को अपने रथियों का विवरण सुना रहे थे, उन्होंने कर्ण को अर्ध रथियों की श्रेणी में रखा था, इस पर भी अमर्ष में भी कर्ण ने ऐसी ही प्रतिज्ञा की थी और निभाई थी। पितामह भीष्म के धराशायी हो जाने के उपरान्त ही कर्ण समरांगण में उतरा। यह प्रसंग दोनों महारथियों की कटुता की परकाष्ठा को इंगित करता है, परन्तु अन्त समय में पितामह भीष्म पिघलकर मोम हो गए और अपने अन्तिम समय में शान्ति स्थापना का उद्योग इन शब्दों में करने लगे।

सोदर्याः पाण्डवा वीरा भ्रातरस्तेऽरिसूदन।
संगच्छतैर्महाबाहो मम चेदिच्छसि प्रियम्।।
माया भवतु निवृत्तं वैरमादित्य नन्दन।
पृथिव्यां सर्व राजानो भवन्त्वद्य निरामयाः।।

–भीष्म. ३०.१८.१६

अथार्त् पाण्डव तुम्हारे सगे भाई हैं। मेरी प्रसन्नता इस बात में है कि तुम उनके साथ मिल जाओ। मेरी मृत्यु के द्वारा यह वैर की आग बुझ जाये। पृथ्वी भर के सब राजा निरामय हो जायें। इस अन्तिम वाक्य में पितामह ने अपने हृदय को खोलकर उँडेल दिया है और अपनी अन्तिम अभिलाषा प्रकट कर दी है। पर जैसे शान्ति की अभिलाषा में पहले कृष्ण विफल हो गये थे, वैसे इस बार भीष्म भी। कर्ण ने फिर अस्वीकृति में हाथ उठाया और जो उत्तर दिया वह जो पूर्व मे भी उद्धृत किया था–

वसु चैव शरीरं च पुत्रदारं तथा यशः।
सर्वं दुर्योधनस्यार्थे त्यक्तं वै भूरिदक्षिणः।

इस पर प्रश्न यह है कि कर्ण–जन्म की इस घटना को दीर्घकाल तक आखिर क्यों छुपाया गया। कृष्ण ने इसे तब खोला जब वे शान्तिदूत के रूप में विफल हो गये थे, कुन्ती ने और भी बाद में, जब कृष्ण दुर्योधन के बाद कर्ण से भी निराश हो चुके, पुनः पितामह ने रहस्य को खोला जब युद्ध प्रारम्भ होकर वे स्वयं मृत्यु की दाढ़ों में थे। प्रश्न ये भी है कि क्या इस रहस्य से पर्दा उठाने का इन साक्ष्य महारथियों को कोई अवसर अब तक नहीं मिला था?

अब थोड़ा पीछे मुड़कर देखिये। द्रोणाचार्य कौरव–पाण्डव दोनों के गुरू थे। दुर्योधन तब भी पाण्डवों से ईर्ष्या करता था। राजकुमारों की शिक्षा समाप्त होने पर आचार्य ने राजपुत्रों के कौशल के प्रदर्शनार्थ राज–परिवार की भव्य सभा रखी। प्रदर्शन के अन्तिम चरण में अर्जुन के कौशल प्रदर्शन के अनन्तर नाटकीय ढंग से कर्ण का आगमन हुआ। उसने अर्जुन को चुनौती देते हुए कहा कि तुमने जो आश्चर्यकारक प्रदर्शन किये हैं, उन सबको मैं अधिक अच्छी प्रकार दिखा सकता हूँ। फिर द्रोणाचार्य की स्वीकृति लेकर उसे दिखा भी दिये। इससे दुर्योधन ने उसके प्रति आकर्षित होकर उसका आलिंगन किया, जबकि अर्जुन ने उसके प्रति कटु वचन सुनाये, इस प्रकार अर्जुन और कर्ण का वाग्युद्ध प्रारम्भ हो गया जो अन्त में वास्तविक भिड़न्त के निकट पहुंच गया। तब कृपाचार्य ने बीच में पड़कर कर्ण से माता–पिता और कुल विषयक प्रश्न पूछे। इस प्रकार एक अकुलीन के साथ राजपुत्र के युद्ध को निषिद्ध कर दिया। तभी दुर्योधन ने उसे अंगदेश का राजा घोषित कर तत्काल राज्याभिषेक करके अनुलीनता का निराकरण किया। इस प्रकार दोनों में दृढ़ मैत्री हो गई। इसी बीच अकस्मात् वहाँ अधिरथ प्रकट होता है, जो कर्ण का आलिंगन कर उसे आशीर्वाद देता है, कर्ण के सूत–पुत्र होने की पुष्टि हो जाती है। अर्जुन के साथ संग्राम टल जाता है। इस सभा में पितामह भीष्म और माता कुन्ती दोनों उपस्थित थे। सारा घटनाक्रम उनके सामने घटित हुआ था, पर दोनों चुप्पी साधे रहे, क्यों? इसी प्रकार द्रौपदी के स्वयंवर में कर्ण भी पहुँचा था और उसने लक्ष्य–वेध भी किया था, परन्तु सूत होने से द्रौपदी ने उसे वरने से मना कर दिया। वहां श्री कृष्ण उपस्थित थे, तब वहां भी उन्होंने मौन ही साधे रखा, यह भी रहस्य है।

सीधी बात यह निकल आई कि कर्ण अधिरथ का पलित पुत्र था जो उसकी पत्नी राधा के नाम पर राधेय नाम से ख्यात हुआ। इसी रूप में कृष्ण, कुन्ती और भीष्म सहित समकालीन समाज इसे जानता–समझता था। जब महाभारत युद्ध उपस्थित हुआ, सन्धिवार्ता विफल हुई तो पाण्डवों के परम–शुभचिन्तक और महाभारत के परिणामों के निर्माता श्री कृष्ण ने दुर्योधन को दुर्बल कर पाण्डवों के पक्ष–पोषण के उद्देश्य से कुन्ती की गोपनीय स्वीकृति के साथ यह कल्पित कथा रची और यथावसर उसका प्रयोग किया और कराया, परन्तु कर्ण जैसे ठोस व्यक्तित्व के सम्मुख उनके निहितार्थ फलित न हो सके।

स्वास्थ्य चर्चा :-

गुणकारी मेंथी

मेंथी में अनेक लाभ हैं। सब्जी में झौंक के रूप में इसके दाने पड़ते हैं। इसकी पत्तियों का साग बनता है और इसके बीज अनेक शारीरिक रोगों में प्रयोग किये जाते हैं। इसकी पत्तियाँ भी औषधि के रूप में इस्तेमाल की जाती है। मेथी के बीज या मेथी के हरे पत्ते किसी भी तरह से हर रोज सेवन करने से मोटापा की शिकायत व्यक्ति को नहीं रहती है।

फोड़ों–फुंसी की शिकायत रहती हो तो दाना मेथी को पानी के साथ उबटन की तरह पीस लें और उसमें थोड़ा सा पुल्टिस बनाकर फोड़े–फुंसी पर बांध दें। मेथी के पत्ते भी पीसकर गर्म करके फोड़े–फुंसी पर बांधने से वही लाभ होता है। इसमें थोड़ा घी और तेल अवश्य मिला लें।

मेथी कब्ज का भी नाश करती है। रात को दो चम्मच दाना मेथी की फक्की पानी से लेकर सोंये। मेथी दाना पेट की आंतों को रगड़कर जमे हुए मल को निकालने का काम करता है और मल को सूखने भी नहीं देता है।

मेथी ज्वर नाशक भी है तीन चम्मच मेथी दाना को कप पानी में उबालें और आधा पानी रह जाये तो छानकर रोगी को प्रतिदिन तीन पिलायें। तेज ज्वर कम होकर उतर जाता है।

मुंहासे एवं झुर्रियां हों तो दाना मेथी दूध में भिगो दें और दो घंटे भीगने पर दूध में पीसकर चेहरे पर लेप करें। इससे मुहांसे, झुर्रियां दूर होती हैं। त्वचा की शुष्कता भी इससे दूर होती है।

एक गिलास पानी में तीन चम्मच मेथी दाना डालकर उबालें और इस उबाले हुए पानी को छानकर गरारे करें। इस पानी से दिन भर में तीन चार बार गरारे करने से गले की खराश समूल नष्ट हो जती है।

हड्डी टूटने की स्थिति में मेथी हितकर होती है। दाना मेथी पीसकर आटे में डालकर हलवा बनाकर खाये या मेथी दाना की फक्की लें। टूटी हुई हड्डी के जुड़ने में इससे मदद मलती है।

प्रतिदिन दो चम्मच मेथी दानों को फांकने वाले व्यक्ति को लकवा, पोलियो, हृदयरोग, निम्न एवं उच्च रक्त चाप, मधुमेह, गठिया, सांस के रोग, हड्डी का बुखार, बवासीर और जोड़ो का दर्द आदि नहीं होते हैं। इसके नियमित प्रयोग का कोई दुष्प्रभाव नहीं होता है तथा परहेज भी कोई नहीं है। इसके सेवन से नस नाड़ियों का अवरोध भी दूर होता है।

वेद प्रचार समारोह

आर्य समाज, राजाजीपुरम, लखनऊ
(डी तथा ई ब्लॉक के मध्य, सड़क मार्ग पर, डी–ब्लाक, पुल के निकट), म. नं. ई– १०३२ के सामने)

११ सितम्बर सोमवार से १७ सितम्बर २०१७ रविवार तक बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जा रहा है। उपदेशक आचार्य विश्वव्रत शास्त्री, एवं आचार्य संतोष वेदालंकार जी होगें।

कार्यक्रम में आप सादर आमंत्रित हैं।

सम्पर्क :– प्रधान निरंजन सिंह
मो0 9450930972, 9400589383

आवश्यक सूचना

जिला आर्य प्रतिनिधि सभाओं के अधिकारियों से निवेदन है कि अपने जिले की समस्त समाजों का विवरण तैयार करके जिसमें समाज नाम– स्थापना तिथि– सम्बद्धता तिथि, अधिकारियों के नाम व फोन नम्बर, सदस्यों की कुल संख्या भी अंकित हो चार्ट बनाकर कार्यालय में जमा करावें उसकी पत्रावली बना लेवें। आपके लिए भी वार्षिक विवरण एवं निर्वाचन में सुविधा रहेगी। पूरे प्रदेश की समाजों को कम्प्यूटर में अंकित करना है आपके सहयोग की आवश्यकता है।

– धर्मेश्वरानन्द सरस्वती

प्रेरक प्रसंग –

नेपोलियन और बालक लेनार्ड

– हरीश शास्त्री

एक युद्ध में नेपोलियन वोनापार्ट के सैनिकों ने कुछ अंग्रेजी जहाजों को पकड़ लिया। उन जहाजों से बन्दी बनाए गए लोगों में उन्नीस वर्षीय युवा भी था। उसका नाम लेनार्ड था।

अगले दिन इंगलैण्ड से आया एक अन्य लड़का बोनापार्ट के सैनिकों के हाथ लग गया। सैनिकों ने उसे भी पकड़कर लेनार्ड वाले कैदखाने में बन्द कर दिया। रात्रि में उस दूसरे लड़के ने लेनार्ड को एक पत्र दिया, जिसमें लिखा था–

मेरे बेटे लेनार्ड। मैं इस वक्त काफी बीमार चल रही हूँ, शायद मेरा बच पाना अब कठिन है। अतः मेरी अन्तिम प्रबल इच्छा तुम्हें देखने की है। तुम जहां कहीं भी हो, जितनी जल्दी हो सके मेरे बेटे मेरे पास ले आओ। ..... तुम्हारी माँ

उस पत्र को पढ़ने के बाद लेनार्ड अपनी माता को देखने के लिए तड़प उठा और किसी भी तरह जल्दी से अपनी माँ के पास पहुंचने का उपाय सोचने लगा।

उसी रात्रि में, अपने साथी लड़के की मदद से उस कैदखाने के सींखन्जो को चौड़ा कर वह भाग निकला। किन्तु पकड़ा गया। अब सैनिकों ने उसके साथ सख्ती बरती और उसके पैरों में जंजीर की बेड़ियां पहना दी।

लेनार्ड ने दूसरी रात को पुनः प्रयत्न किया और अपने पैरों में बंधी जंजीरों की बेड़ियों को काटकर भाग निकला। परन्तु बोनापार्ट के सैनिकों द्वारा फिर पकड़ा गया।

तीसरी रात्रि में एक बार फिर से लेनार्ड कैदखाने से भागने में सफल हो गया। किन्तु! दुर्भाग्यवश फिर ने उन सैनिकों के हाथ लग गया।

अगली सुबह नेपोलियन बोनापार्ट जब जेल दौरे पर आया, तो वहां के सैनिकों ने उसको लेनार्ड के तीन बार भागने के बारे में जानकारी बतायी तथा लेनार्ड को मौत के घाट उतारने की नेपोलियन से आज्ञा मांगी।

नेपोलियन के मन में उस नवयुवक लेनार्ड को देखने को देखने की जिज्ञासा उठी, उसने सैनिकों को लेनार्ड को लाने का आदेश दिया।

सैनिकों ने आज्ञा पाते ही लेनार्ड को तुरन्त नेपोलियन बोनापार्ट के सामने हाजिर कर दिया। नेपोलियन ने उस युवक को नींचे से ऊपर तक देखा, फिर पूछा– लेनार्ड! आखिर तुम्हारे पास ऐसा कौन सा मनोबल है, जो तुम्हें बार–बार कैदखाने से भागने को प्रेरित करता है।

उस बालक ने बालक ने अपने जेब से वह पत्र निकाला और उसे नेपोलियन को दे दिया। उस पत्र को पढ़ते ही नेपोलियन को सारा मांजरा समझ में आ गया। उसने उसी क्षण लेनार्ड के हाथों में दो सोने की मोहरें थमा दी और अपने सैनिकों को आदेश दिया कि–इस युवक को तुरन्त ही जेल से रिहा कर दिया जायए। क्योंकि इस बच्चे का मनोबल इतना ऊँचा है कि दुनियाँ की कोई दीवार इसे नहीं रोक पायेगी।

''सफलता का पहला रहस्य है आत्मविश्वास''

भागीरथी शिक्षा समिति लखनऊ की अध्यक्ष श्रीमती लक्ष्मी गौतम ने भी श्री सच्चिदानन्द गुप्त जी के निधन पर शोक व्यक्ति किया है।

पृष्ठ – ६ का शेष

जीवात्मा की ....

को आग लागई। स्वयं भी उसमें बैठ गई। अग्नि प्रज्वलित हुई। चहुं ओर लपटें फैलने लगीं। रानी अपूर्व कन्या अब भी रो रही थी। उसके क्रन्दन से वन गूंज रहा था। तभी उन लपटों में से आवाज़ आई– ''पुरंजन! ओ पुरंजन!''

रानी ने आश्चर्य से इधर–उधर देखा, कोई भी उसे दिखाई नहीं दिया, परन्तु ध्वनि ने फिर कहा–पुरंजन! रोना बन्द करो। तुम स्त्री नहीं हो, रानी नहीं हो, अपूर्व कन्या भी नहीं हो।''

रानी ने आयश्चर्य से कहा– '' तुम कौन हो, जो आवाज़ दे रहे हो?''

ध्वनि ने कहा– ''पहले यह समझो कि तुम अपूर्व कन्या नहीं हो। तुम पुरंजन हो। कभी तुम पुरुष थे। अब स्त्री हो। वास्तव में तुम स्त्री–पुरुष भी नहीं हो।''

रानी ने कहा– ''और तुम कौन हो?''

ध्वनि ने कहा– '' मैं तुम्हारा अज्ञात नाम वाला मित्र हूं और मैं ही तुम्हारा मित्र हूं, दूसरा कोई मित्र नहीं, कोई सम्बन्धी नहीं, कोई पति या पत्नी नहीं, पुत्र या पुत्री नहीं।''

तब उस पुरंजन ने अपने इस मित्र को पहचाना। तब उसने समझा कि अग्नि उसे जला नहीं सकती। इसके लिए, मलयध्वज के लिए या किसी भी आत्मा के लिए कोई मृत्यु नहीं और सबका मित्र वह एक है जिसे लोग परमात्मा, ईश्वर, परमेश्वर, शिव, शंकर, नारायण और कितने ही नामों से पुकारते हैं।

यह सारी जीवात्मा की कहानी है जो शरीर के साथ मिलकर कभी अपने–आप को अपूर्व कन्या कहता है, कभी पुरंजन, कभी मलयध्वज, कभी विदर्भराज, कभी कुछ और। कई प्रकार के सहस्रों, लाखों, करोड़ों नाम वह अपनाता है, करोड़ों रूप अपनाता है।

आर्य मित्र
नारायण स्वामी भवन, ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ दूर/फैक्सः ०५२२-२२८६३२८
का० प्रधान- ०६४१२७४४३४१, मंत्री- ०६८३७४०२१६२, व्यवस्थापक- ६३२०६२२२०५
ई-मेल : apsabhaup86@gmail.com

सेवा में,
.....
.....

पूर्व मन्त्री उत्तर प्रदेश सरकार एवं पूर्व मन्त्री, आर्य प्रतिनिधि सभा उ0प्र0,

सच्चिदानन्द गुप्त जी के निधन से आर्य समाज को अपूरणीय क्षति हुई

सच्चिदानन्द गुप्त जी के निधन पर उमड़ा जन शैलाब

लखनऊः महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के सच्चे अनुयायी–लाला बद्री प्रसाद शाह के पुत्र सच्चिदानन्द गुप्त जी का निधन दिनांक–03–09–2017 को रात्रि 01.00 बजे 93 वर्ष की अवस्था में हो गया।

सच्चिदानन्द गुप्त–1967 से 1968 तक लखनऊ कैन्टोनमेन्ट बोर्ड के उपाध्यक्ष रहे, 1968 में लखनऊ कैन्ट विधान सभा क्षेत्र से विधायक रहे। सच्चिदानन्द गुप्त, बी0के0टी पार्टी से चुनाव जीतकर उत्तर प्रदेश सरकार में परिवहन मन्त्री व न्याय मन्त्री के पद पर आसीन रहे तथा 1975 से 1981 तक आवास विकास हुडको के निदेशक रहे, 1992 से 1998 तक एम0एल0सी0 रहे, 1995 से 2000 तक आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश, लखनऊ के मन्त्री रहे तथा 2001 से जनवरी, 2004 तक गुरूकुल वृन्दावन के कुलपति पद पर थे तथा श्री गुप्त आर्य समाज कैन्टूमेन्ट सदर, लखनऊ के वर्तमान में संरक्षक पद पर रहे। सच्चिदानन्द गुप्त जी जमीन से जुड़े हुए बहुत ही ईमानदार एवं नेक व्यक्ति थे तथा वे कलम के धनी एवं अधिवक्ता भी थे। श्री गुप्ता जी के तीन पुत्रियां, एक पुत्र, एक पोता एवं एक पोती है। सच्चिदानन्द गुप्त जी, मूल निवासी जरवल, बहराइच के थे, इनके पिता श्री लाला बद्री शाह जी थे, जो स्वतंत्रता संग्राम सेनानी थे तथा महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती एवं वैदिक सिद्धान्तों के अनुगामी थे तथा अपने पिता जी के मार्गों पर चलकर उन्होंने अपने जीवन को अन्तिम सांसों तक

–डॉ धीरज सिंह–सभा प्रधान.

समाज सेवा का कार्य किया। श्री गुप्त जी पूर्व प्रधानमन्त्री–चौधरी चरण सिंह जी के विचारों का अनुशरण करते हुए, पूरी जिन्दगी राष्ट्रीय लोक दल में विभिन्न पदों पर रहकर एक निष्ठावान कार्यकर्ता बनकर पार्टी को आगे बढ़ाने का कार्य करते रहे।

गुप्त जी के पार्थिव शरीर पर आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा साल एवं पुष्प चक्र अर्पित किया गया तथा राजकीय सम्मान के साथ दिनांक–03–09–2017 को दोपहर 02 बजे पिपरा घाट, गोमती नदी तट, लखनऊ में उत्तर प्रदेश प्रशासन द्वारा अन्तिम सलामी देकर वैदिक मंत्रोच्चार के साथ अन्तिम संस्कार किया गया।

इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा उ0प्र0 के प्रधान–डॉ0 धीरज सिंह, स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती–मन्त्री, अरविन्द कुमार–कोषाध्यक्ष, कृष्ण मुरारी यादव, भुवनचन्द्र पाठक, हरीश कुमार शास्त्री, आशुतोश सिंह चौहान, शत्रोहन शर्मा, गोविन्दराम रिसाल सिंह एवं प्रदेश के विभिन्न जनपदों से आर्य समाज के सदस्यों ने गहरा शोक व्यक्त किया है।

गुप्त जी के निधन से आर्य समाज परिवार को अपूर्णनीय क्षति पहुँची है, जिसकी भरपाई किया जाना सम्भव नहीं है। ईश्वर से प्रार्थना है कि वे दिवंगत आत्मा को शान्ति एवं शोक संतप्त परिवार जो इस असह्य दुःख को सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

श्रद्धांजलि कार्यक्रम दिनांक-14 सितम्बर, 2017 को

श्री सच्चिदानन्द गुप्त–पूर्व मन्त्री, आर्य प्रतिनिधि सभा उ0प्र0, लखनऊ के निधन के बाद दिनांक–14 सितम्बर, 2017 (बृहस्पतिवार) को आर्य प्रतिनिधि सभा उ0प्र0, नारायण स्वामी भवन, 5–मीराबाई मार्ग, लखनऊ कार्यालय में दोपहर 01.00 बजे से डॉ0 धीरज सिंह–प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा उ0प्र0, लखनऊ की अध्यक्षता में श्रद्धांजलि सभा के कार्यक्रम आयोजित है, जिसमें आर्य प्रतिनिधि सभा उ0प्र0, लखनऊ के पदाधिकारियों, अन्तरंग सदस्यों एवं प्रदेश में कार्यरत् सभी आर्य समाज के पदाधिकारियों से निवेदन है कि वे उपस्थित होकर श्री गुप्त जी के प्रति अपनी भावभिनी श्राद्धांजलि समर्पित करें।

(स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती) – सभा मन्त्री

स्वामी–आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश सम्पादक – मुद्रक –प्रकाशक –श्री स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती, भगवानदीन आर्य भाष्कर प्रेस, 5–मीराबाई मार्ग, लखनऊ के लिए अस्थायी रूप में शारदा प्रिंटिंग प्रेस, माडल हाउस, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित लेखों में वर्णित भाषा या भाव से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है– सम्पूर्ण विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ न्यायालय होगा।